रिपोर्ट
अगस्त 2020

संकटग्रस्त वन्यजीव आवास क्षेत्र:

यह क्या है, इसका क्रियान्वयन कैसे होना चाहिए, और इसे किस प्रकार आगे बढ़ाया जा रहा है?

शरच्चंद्र लेले
नीमा पाठक ब्रूम
अतुल जोशी
अक्षय छेत्री
मीनल तत्पती
श्रुती मोकाशी

सेंटर फॉर एनवायरनमेंट & डेवलपमेंट, ATREE
कल्पवृक्ष

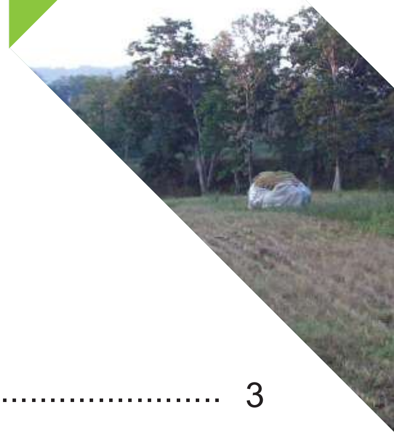

विषय सूची

सारांश 3

1. पृष्ठभूमि.. 7

2. संकटग्रस्त वन्यजीव आवास क्षेत्र के प्रावधान और उनकी मूल अवधारणा 9

    2.1 कानूनी प्रावधान 9

    2.2 मूल अवधारणाएं 9

3. संरक्षण क्षेत्रों के अंतर्गत संकटग्रस्त वन्यजीव आवास
क्षेत्र की पहचान करने की प्रक्रिया 11

    3.1 नोडल एजेंसी और अन्य सरकारी
    संस्थाओं की ज़िम्मेदारियाँ 11

    3.2 संरक्षण क्षेत्र के लिए संकटग्रस्त वन्यजीव
    आवास क्षेत्र विशेषज्ञ समिति की ज़िम्मेदारियाँ 12

    3.3 सिफारिश के बाद सरकारी एजेंसियों की ज़िम्मेदारियाँ 13

4. महाराष्ट्र में शुरू की गई संकटग्रस्त वन्यजीव
आवास क्षेत्र प्रक्रिया में कानूनी विचलन 14

5. आगे की दिशाए 17

सारांश

अनुसूचित जनजाति तथा अन्य पारंपरिक निवासी (वन अधिकारों को मान्यता) अधिनियम 2006, जिसे वन अधिकार अधिनियम के नाम से जाना जाता है, पहला ऐसा कानून है जिसने स्पष्ट तरीके से भारत के वनवासियों के ऐतिहासिक रूप से नज़रंदाज़ किए गए अधिकारों को वापस बहाल करने के लिए प्रयास किया। इसमें मान्यता दी गई कि वनवासी "वन पारिस्थितिकी की उत्तरजीविता और शाश्वतता का अभिन्न अंग हैं" और उन्हें (अन्य अधिकारों के साथ-साथ) सामुदायिक वन संसाधन अधिकार दिए गए, जिससे कि वे शाश्वत तरीके से वनों और उनकी जैवविविधता का प्रबंधन और संरक्षण कर सकें, और ऐसा करने के लिए इसमें प्रक्रियाएं भी रेखांकित की गईं।

इसके साथ ही, वन अधिकार अधिनियम में स्थानीय समुदायों और वन्यजीवों के बीच के संघर्ष को संबोधित करने के लिए भी प्रणाली दी गई है - यदि इन अधिकारों का उपयोग करने और संरक्षित क्षेत्रों में वन्यजीवों की आवश्यकताओं के बीच किसी मतभेद की स्थिति उभरती है (संरक्षित क्षेत्र, मतलब कि अभ्यारण्य और राष्ट्रीय उद्यान) तो संरक्षित क्षेत्र के अंतर्गत संकटग्रस्त वन्यजीव आवास क्षेत्र की घोषणा किए जाने का प्रावधान है।

वर्ष 2020 के मध्य तक, देश में किसी भी संकटग्रस्त वन्यजीव आवास की अधिसूचना नहीं की गई। लेकिन, मुंबई उच्च न्यायलय में एक याचिका के परिणामस्वरूप, महाराष्ट्र वन विभाग ने वर्ष 2018-19 में राज्य के 54 संरक्षित क्षेत्रों में संकटग्रस्त वन्यजीव आवास तय करने के लिए 54 विशेषज्ञ समितियाँ गठित कर दीं, और मेलघाट अभ्यारण्य में वर्ष 2019 में संकटग्रस्त वन्यजीव आवास की घोषणा करने की प्रक्रियाएं शुरू कर दी गईं, जिसके कारण काफ़ी विवाद हुए और अंततः न्यायालय को इस पर रोक लगाने का आदेश देना पड़ा।

संकटग्रस्त वन्यजीव आवास के प्रावधानों का सही तरीके से लागू किया जाना ज़रूरी है, जिससे कि देश में एक सामाजिक रूप से न्यायपूर्ण और प्रभावकारी संरक्षण प्रणाली लागू की जा सके। लेकिन इसके लिए संकटग्रस्त वन्यजीव आवास की घोषणा से जुड़े इस कानून के जटिल प्रावधानों और प्रक्रियाओं की विस्तृत समझ होनी ज़रूरी है - ऐसी प्रक्रियाएं जिन्हें भारत के वन्यजीव संवर्धन परिदृश्य में इससे पहले कभी लागू नहीं किया गया है।

यह रिपोर्ट आसान भाषा में संकटग्रस्त वन्यजीव आवास से संबंधित मूल कानूनी प्रावधानों, उनकी व्याख्या, और प्रक्रियाओं को स्पष्ट करने का प्रयास है, जो कि ज़मीनी स्तर पर इसके सही कार्यान्वयन के लिए ज़रूरी हैं। हम महाराष्ट्र में वन विभाग के द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया के विषय पर भी बात करेंगे।

संकटग्रस्त वन्यजीव आवास प्रावधानों में वन्यजीव संरक्षण से संबंधित किसी भी प्रकार के संभावित संघर्ष का समाधान करने के लिए पालन की जाने वाली विस्तृत प्रक्रियाएं दी गई हैं। यदि प्रावधानों को सावधानी से पढ़ा जाए, तो इस प्रक्रिया के निम्नलिखित चरण हैं:

क) पहले वन अधिकारों को संपूर्ण मान्यता दी जाए,

ख) उचित प्रतिनिधित्व के साथ एक विशेषज्ञ समिति गठित की जाए, जिसमे स्थानिक समुदाय का प्रतिनिधित्व भी शामिल है

ग) यह समिति विमर्श की एक खुली प्रक्रिया अपनाएगी,

घ) प्रत्येक मामले के लिए व्यक्तिगत रूप से वैज्ञानिक और निष्पक्ष आधार का उपयोग किया जाएगा,

च) वन्यजीव प्रजातियों को होने वाले अपरिवर्तनीय क्षति के खतरे (केवल खतरा नहीं) और उनके अस्तित्व के लिए खतरे स्थापित किए जाएं,

छ) पहले सह-अस्तित्व व अन्य 'उचित विकल्प' (जिसमें अधिकारों के संशोधन की संभावना या फिर उनके उपयोग में परिवर्तन की संभावना शामिल है) पर विचार किया जाए,

ज) पुनर्वास पर तभी विचार किया जाए जब यह स्थापित कर दिया गया हो कि सह-अस्तित्व बिल्कुल भी संभव नहीं है,

झ) यदि पुनर्स्थापन आवश्यक है, तो पुनर्स्थापन पैकेज में सभी कानूनों और नियमों का पालन किया जाए, और इसके बारे में पुनर्स्थापित होने वाले समुदाय को पूरी तरह से सूचित किया जाए, और नए स्थान के बारे में, वहां मिलने वाली सुविधाओं के बारे में विस्थापित होने वाले समुदाय को पूरी पूरी संतुष्टि हो|,

ट) फिर से, यदि पुनर्स्थापन आवश्यक है, तो समुदाय अपनी सूचित सहमति दे।

संकटग्रस्त वन्यजीव आवास (खंड 2) में अनतिक्रांत (inviolate) शब्द के उपयोग की जब परिचालन से संबंधित अंश 4(2) के साथ व्याख्या की जाए, तो इसका मतलब है एक ऐसी स्थिति जिसमें वन्यजीवों के लिए कोई "अपरिवर्तनीय क्षति या खतरा नहीं है"। अतः, संकटग्रस्त वन्यजीव आवास की घोषणा का मतलब यह नहीं है कि उस क्षेत्र के वनवासियों को निश्चित तौर पर पुनर्स्थापित किया जाना है| वह क्षेत्र वनाधिकारों (यदि कोई हैं) में संशोधन करके सह-अस्तित्व का क्षेत्र भी हो सकता है। और संकटग्रस्त वन्यजीव आवास की घोषणा केवल (कानूनी रूप से अधिसूचित) अभ्यारण्यों और राष्ट्रीय उद्यानों के अंदर ही की जा सकती है।

संकटग्रस्त वन्यजीव आवास प्रावधानों की ऊपर दी गई व्याख्या के साथ केन्द्रीय सरकार द्वारा जारी किए गए दिशा निर्देशों के आधार पर कहा जा सकता है कि इसे निम्नलिखित चरणों में कार्यान्वित किया जाना चाहिए।

राज्य स्तर पर:

1. राज्य नोडल एजेंसी द्वारा संरक्षित क्षेत्र के अंदर और आस पास की सभी बस्तियों में वन अधिकार अधिनियम के अंतर्गत दिए गए सभी अधिकारों का कड़ा कार्यान्वयन किया जाना चाहिए, विशेषकर सामुदायिक वन संसाधन अधिकार प्रावधानों का। और इन बस्तियों के ग्राम सभाओं को अपनी प्राथमिक सामुदायिक वन संसाधन अधिकार प्रबंधन योजना बनाने के लिए सशक्त किया जाना चाहिए।

2. संकटग्रस्त वन्यजीव आवास की आवश्यकता निर्धारित करने के लिए विशेषज्ञ समिति गठित करने का निर्णय तभी लिया जाना चाहिए, जब बहु-एजेंसी कार्यदल ने यह स्थापित कर दिया हो कि सामुदायिक वन संसाधन प्रबंधन योजनाएं प्रत्यक्ष रूप से वन्यजीवों के लिए खतरा पैदा करेंगी।

3. संरक्षित क्षेत्र स्तर की विशेषज्ञ समिति को 2018 के दिशानिर्देशों के आधार पर गठित किया जाना चाहिए, जिसमें जीव विज्ञान और सामाजिक विज्ञान के विशेषज्ञों का शामिल होना आवश्यक है, और आदर्श रूप से ऐसी संस्थाओं के प्रतिनिधि भी शामिल हों जो क्षेत्र में वन अधिकार अधिनियम को बढ़ावा देने के लिए काम करते हैं। इस समिति को वन अधिकार अधिनियम पर और संकटग्रस्त वन्यजीव आवास प्रावधानों तथा प्रक्रियाओं पर विशिष्ट रूप से दिशानिर्देश देकर प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए ।

इस विशेषज्ञ समिति का काम चुनौतीपूर्ण है, जिसमें उसे:

4. ग्राम सभाओं के साथ मिलकर निर्धारित करना है कि सामुदायिक वन संसाधन प्रबंधन योजनाओं के अंतर्गत दिए गए वनाधिकारों के कारण कहाँ और कैसे वन्यजीव प्रजातियों को अपरिवर्तनीय क्षति हो सकती है। इसके लिए कोई निर्णय लेने से पहले, संभवतः वर्तमान योजनाओं के प्रभावों की पाँच वर्षों तक जांच करनी पड़ सकती है।

5. यदि क्षेत्र में सामूहिक रूप से कोई खतरा स्थापित किया जाता है, तो सामुदायिक वन संसाधन प्रबंधन योजनाओं में संशोधन या फिर, यदि ज़रूरी हो तो योजनाओं में दिए गए अधिकारों या उनको लागू करने के तरीकों में संशोधन के माध्यम से सह-अस्तित्व की संभावना का परीक्षण किया जाए।

6. यदि सह-अस्तित्व संभव है, तो लंबे समय के लिए सह-प्रबंधन प्रणाली बनाई जाए।

7. यदि सह-अस्तित्व संभव नहीं है, तो संरक्षित क्षेत्र के संबंधित हिस्सों के लिए एक व्यापक पुनर्स्थापन पैकेज का प्रस्ताव तैयार किया जाए, जो कि सरकार की पुनर्वास और पुनर्स्थापन के मौजूदा कानूनों और नीतियों के अनुरूप हो, और उसके लिए सभी संबंधित ग्राम सभाओं की पूर्णतया सूचित सहमति प्राप्त की गई हो।

8. ऊपर दिए गए चरण 6 और/ या 7 में पहचान किए गए क्षेत्रों के लिए संकटग्रस्त वन्यजीव आवास की घोषणा किए जाने की सिफारिश देना।

9. **उसके बाद**, 2018 के दिशानिर्देशों के अनुसार, सरकारी एजेंसियों को राज्य वन्यजीव बोर्ड और केन्द्रीय सरकार का मत लेना ज़रूरी है।

10. इन एजेंसियों द्वारा दिए गए बदलावों के किसी भी सुझाव पर संकटग्रस्त वन्यजीव आवास अधिसूचित करने से पहले ग्राम सभाओं की स्वीकृति लेनी ज़रूरी है।

11. राज्य सरकार को सह-प्रबंधन और/ या पुनर्वास को लागू करने के लिए प्रणाली भी स्थापित करनी होगी।

महाराष्ट्र में लागू की गई संकटग्रस्त वन्य जीव आवास ने इन प्रावधानों में से कई का अनुसरण नहीं किया। सबसे पहले तो, वन अधिकारों की बंदोबस्ती की प्रक्रिया पूरी होने में बहुत काम बाकी है। हमने जिन 39 संरक्षित क्षेत्र का विश्लेषण किया, उनमें लगभग 1000+ गाँव हैं जिनके अधिकार संरक्षित क्षेत्र की सीमाओं से व्याप्त हो सकते हैं, जिनमें से केवल ~150 गांवों को सामुदायिक वन संसाधन अधिकार प्राप्त हुए हैं।

इसके अतिरिक्त, कई अन्य अनियमितताएं और गलतियां हैं जिसमें शामिल है :

1. वनवासियों के अधिकारों को स्थापित करने की प्रक्रिया हुए बिना ही उनको संरक्षित क्षेत्र से पुनर्स्थापित कर देना।

2. वन विभाग ने दावा किया है कि 25 संरक्षित क्षेत्र में, कोई मानव बस्ती नहीं है और इसलिए वहाँ कोई वनाधिकार नहीं हैं, जो कि गलत है और इस बात को नज़रंदाज़ करता है कि संरक्षित क्षेत्र की सीमा से लगते हुए गांवों के भी संरक्षित क्षेत्र में अधिकार हो सकते हैं।

3. विशेषज्ञ समितियों का गठन 2018 के दिशानिर्देशों के अनुरूप नहीं हुआ है और उनको दिया गया कार्य का दायरा कानून के कई प्रावधानों का उल्लंघन करती हैं।

4. यह समितियाँ संदर्भ-विशिष्ट वैज्ञानिक और निष्पक्ष मानदंड स्पष्ट किए बिना काम कर रही हैं, और उन्होंने संकटग्रस्त वन्यजीव आवास की व्याख्या मनुष्य-रहित क्षेत्रों के रूप में की है, जहां वे यह स्थापित नहीं करते कि वन्यजीवों को असल में किस चीज़ से खतरा है।

हांलाकी महाराष्ट्र राज्य वन अधिकार अधिनियम के क्रियान्वयन में अग्रणी रहा है, ऊपर दी गई अनियमितताएं दर्शाती हैं कि संकटग्रस्त वन्यजीव आवास को हड़बड़ी में लागू करने से वही अन्याय फिर से दोहराया जाएगा, जिसे असल में यह कानून ठीक करने का प्रयास कर रहा है। अगर इस ऐतिहासिक अन्याय को दोहराना नही है तो ये अत्यंत आवश्यक है की वर्तमान की संकटग्रस्त वन्यजीव आवास प्रक्रिया और संरक्षित क्षेत्रों से विस्थापन की प्रक्रिया को रोक कर, अधिकारों की मान्यता की प्रक्रिया और ग्राम-सभा स्तरीय नियोजन की प्रक्रिया को पूरा किया जाए,और फिर से उचित प्रशिक्षण तथा चर्चाओं के आधार पर इस प्रक्रिया को शुरू से करना सुनिश्चित किया जाए ताकि स्थानीय समुदायों की सक्रिय सहभाग से वनाधिकारों और वन्यजीव संरक्षण के मुद्दों के बीच के तनाव का समाधान प्राप्त किया जाए। जो भी राज्य संकटग्रस्त वन्यजीव आवास प्रावधानों का उपयोग करने की सोच रहे हैं, वहाँ उपरोक्त प्रक्रिया का अनुसरण किया जाना चाहिए।

1. पृष्ठभूमि

भारत एक ऐसा देश है, जहां तुलनात्मक रूप में देखे तो एक छोटे-से वन क्षेत्र में न सिर्फ बहुत अधिक जैवविविधता पाई जाती है, बल्कि उसमें सांस्कृतिक रूप से समृद्ध विविध वनवासी भी रहते हैं, जिनके वनाश्रित जीवन और आजीविकाओं की लम्बी परंपरा और इतिहास है। जैवविविधता संरक्षण इन परंपराओं से गहराई से जुड़ा हुआ है।

इसके विपरीत, आधुनिक वन्यजीव संरक्षण आंदोलन ने इस विचार को बढ़ावा दिया है कि संरक्षण के लिए अनतिक्रांत (inviolate) क्षेत्रों की ज़रूरत है, जिसकी व्याख्या ऐसे क्षेत्रों के रूप में की जाती है जहां कोई भी मनुष्य या मानव गतिविधि न हो। लेकिन, कई नयी पीढ़ी के पारिस्थितिकविद, समाज शास्त्री और वनवासी खुद भी, यह मानते हैं कि मानव-वन्यजीव सह-अस्तित्व संभव है और यदि हम एक ऐसी संरक्षण नीति चाहते हैं जो लंबे समय के लिए प्रभावकारी और उपयोगी हो, तो इसे बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

अनुसूचित जनजाति व अन्य पारंपरिक वनवासी (अधिकारों को मान्यता) अधिनियम 2006, जिसे आम तौर पर वन अधिकार अधिनियम के नाम से जाना जाता है, पहला ऐसा कानून है जो स्पष्ट तरीके से इन दोनों मुद्दों (वन अधिकार और वन्य जीव संरक्षण) को संबोधित करता है। इसके लिए उसमें निम्नलिखित प्रावधान हैं:

क. वनवासियों के ऐतिहासिक रूप से नज़रंदाज़ किए गए वन अधिकारों को जिसमे वनों के उपयोग के अधिकार (सी.आर.) भी शामिल है, उनको मान्यता देकर सुरक्षित करना,

ख. उनके सामुदायिक वन संसाधनों तथा उसमें मौजूद जैवविविधता की सुरक्षा, पुनर्जनन, प्रबंधन और संरक्षण के अधिकारों को मान्यता देना,

ग. संकटग्रस्त वन्यजीव आवास प्रावधानों के माध्यम से एक ऐसी प्रणाली स्थापित करना जो स्पष्ट रूप से वन अधिकारों के उपयोग और वन्यजीव संरक्षण की आवश्यकताओं के बीच सामंजस्य बिठाए (यदि इन दोनों के बीच कोई विवाद हो तो)।

वन अधिकार अधिनियम का क्रियान्वयन कई वर्षों से घिसटता चला आ रहा है। विशेषकर, सामुदायिक वन संसाधन अधिकार प्रावधानों की प्रक्रियाएं ज़्यादातर अपूर्ण हैं। इसलिए इसमें आश्चर्य की बात नहीं है कि, हांलाकी केन्द्रीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय (पर्यावरण मंत्रालय) ने वर्ष 2018 में दिशा निर्देश जारी कर दिए थे, लेकिन संकटग्रस्त वन्यजीव आवास क्षेत्र प्रावधानों को अभी तक देश के किसी भी संरक्षित क्षेत्र, मतलब कि अभ्यारण्य या राष्ट्रीय उद्यान में लागू नहीं किया गया है।

लेकिन, उच्च न्यायालय के एक मामले के कारण, महाराष्ट्र वन विभाग ने राज्य के 54 संरक्षित क्षेत्रों में संकटग्रस्त वन्यजीव आवास क्षेत्रों की पहचान करने के लिए 54 विशेषज्ञ समितियां गठित कर दीं, और इसके क्रियान्वयन की गतिविधियां वर्ष 2019 में मेलघाट अभ्यारण्य से शुरू कर दी गई।

हमारा मानना है कि संकटग्रस्त वन्यजीव आवास प्रावधानों का उचित क्रियान्वयन देश में एक सामाजिक रूप से न्यायपूर्ण संवर्धन व्यवस्था लागू करने, और दीर्घकालीन संवर्धन सफलता के लिए अत्यंत ज़रूरी है। इस प्रक्रिया में वनवासी समुदायों को उचित रूप से भागीदार बनाया जाए, न कि उन पर अत्याचार किया जाए। लेकिन सही क्रियान्वयन के लिए **जटिल प्रावधानों, उनके आधारभूत विचारों, और उन पर आधारित प्रक्रियाओं** की सम्पूर्ण समझ होनी अति आवश्यक है - ऐसी प्रक्रियाएं जिन्हें भारत की संवर्धन पृष्ठभूमि में पहले कभी लागू नहीं किया गया। ATREE और कल्पवृक्ष शोध एवं जनवकालत करने वाली

संस्थाएँ हैं जो लंबे समय से संवर्धन, आजीविकाओं, और शासन-प्रणाली के मुद्दों पर काम करती आई हैं। हमें साधारण भाषा में संकटग्रस्त वन्यजीव आवास के मूल प्रावधानों को स्पष्ट करने, उनकी व्याख्या करने, और उन प्रक्रियाओं को स्पष्ट करने की ज़रूरत महसूस हुई जो इनके ज़मीन पर ठीक से क्रियान्वयन के लिए ज़रूरी होंगी। हमें महाराष्ट्र में लागू की गई वर्तमान प्रक्रिया का आकलन करना और इस प्रक्रिया में 2018 के दिशानिर्देशों के उल्लंघनों को समझना और उजागर करना भी आवश्यक लगा। उपरोक्त अनुभवों और विश्लेषणों को ध्यान में रखते हुए तथा इस उद्देश्य से महाराष्ट्र और अन्य राज्यों में संकटग्रस्त वन्यजीव आवास के प्रावधानों को लागू करते समय इन कमियों से उभर कर एक सही प्रक्रिया लागू करने के लिए कुछ सुझाव देने की हमें जरुरत महसूस हुई| इन बातोंको ध्यान में रखते हुए ये दस्तावेज वन हक्क अधिनियम और नियमों, जनवरी 2018 के संकटग्रस्त वन्यजीव आवास दिशानिर्देशों[1], मेलघाट अभ्यारण्य में उन्हें लागू करने के वर्तमान प्रयासों के हमारे अनुभव, और कानूनी विशेषज्ञों की टिप्पणियों पर आधारित है।

[1] https://tribal.nic.in/FRA/declarationsClarifications/CWHGuidelines04012018.pdf

2. संकटग्रस्त वन्यजीव आवास प्रावधान और उनके आधारभूत विचार

2.1 कानूनी प्रावधान

संकटग्रस्त वन्यजीव आवास क्षेत्र को सबसे पहले वन अधिकार अधिनियम के खंड 2(b) में परिभाषित किया गया है।

राष्ट्रीय उद्यानों और अभ्यारण्यों के ऐसे क्षेत्र जिनमें विशिष्ट और स्पष्ट रूप से, क्षेत्र के अनुसार, **वैज्ञानिक और निष्पक्ष मानदंडों** के आधार पर यह स्थापित किया जा चूका है की उन्हें वन्यजीव संरक्षण के लिए अनतिक्रांत (inviolate) रखना आवश्यक है।

इसके लिए जो प्रक्रिया अपनाई जानी है उसका एक अंश इस परिभाषा में ही दिया गया है -

केंद्रीय पर्यावरण एवं वन मंत्रालय द्वारा स्थापित एक विशेषज्ञ समिति द्वारा, जिस में सरकार द्वारा चुने गए **स्थानीय विशेषज्ञ,** जनजाति कल्याण मंत्रालय के प्रतिनिधि आदि शामिल होंगे, **खुली चर्चा करने के बाद** वन अधिकार अधिनियम के खंड 4 के उप-खंडों (1) और (2) में निर्धारित प्रक्रियात्मक आवश्यकताओं का अनुसरण करते हुए ऐसे क्षेत्र निर्धारित किये जायेंगे।

इसके बाद, खंड 4 में स्पष्ट किया गया है कि संकटग्रस्त वन्य जीव आवास क्षेत्रों में क्या-क्या शामिल हो सकता है, विशेषकर वन अधिकार अधिनियम के अंतर्गत सभी वन अधिकारों को मान्यता देने के प्रक्रिया के संदर्भ में, वन अधिकार अधिनियम के क्षेत्रों का निर्धारण करने के लिए पूर्व-शर्तें, और वन हक्कों के मान्यता मिल जाने के बाद की प्रक्रियाएं:

खंड 4(2): राष्ट्रीय उद्यानों और अभ्यारण्यों के संकटग्रस्त वन्यजीव आवास क्षेत्रों में इस अधिनियम के अंतर्गत मान्यताप्राप्त वन अधिकारों को **संशोधित या पुनर्स्थापित किया जा सकता** है, बशर्ते कि किसी भी अधिकारधारक को तब तक पुनर्स्थापित न किया जाए या वन्यजीव संरक्षण के लिए अनतिक्रांत (inviolate) क्षेत्र बनाने के कारण उनके अधिकारों पर तब तक कोई प्रभाव न पड़े, जब तक कि निम्नलिखित शर्तों का पालन न किया गया हो, जो हैं:-

क. सभी विचाराधीन क्षेत्रों के लिए, खंड 6 में निर्धारित अधिकारों को मान्यता देने की प्रक्रिया को पूरा कर लिया गया हो;

ख. राज्य सरकार की संबंधित एजेंसियों द्वारा, वन्यजीव (सुरक्षा) अधिनियम, 1972 के अंतर्गत उन्हें दी गई शक्तियों का पालन करते हुए, यह स्थापित कर दिया गया हो, कि अधिकार धारकों की गतिविधियों या उनकी मौजूदगी के वन्यजीवों पर होने वाले प्रभाव उन प्रजातियों तथा उनके आवास क्षेत्र के लिए अपरिवर्तनीय क्षति पहुंचाने के लिए पर्याप्त है;

ग. राज्य सरकार इस निष्कर्ष पर पहुंची हो कि अन्य विकल्प, जैसे कि सह-अस्तित्व बिलकुल भी संभव नहीं हैं;

घ. पुनर्वास या अन्य विकल्पों का पैकेज तैयार कर लिया गया हो और प्रभावित लोगों और समुदायों को बता दिया गया हो, यह पैकेज सुरक्षित आजीविका उपलब्ध कराता हो और केन्द्रीय सरकार के संबंधित कानूनों और नीतियों में दी गई प्रभावित लोगों और समुदायों की सभी आवश्यकताओं को पूरा करता हो;

च. संबंधित क्षेत्र की सभी ग्राम सभाओं की प्रस्तावित पुनर्स्थापन और पैकेज के लिए लिखित में स्वतंत्र व पूर्व सूचित सहमति ले ली गई हो;

छ. तब तक कोई विस्थापन न हो जब तक कि पैकेज के अनुसार पुनर्वास स्थल पर सभी सुविधाएं और भूमि आवंटन के प्रक्रियाएं पूरी न हो जाए;

बशर्ते कि जिन संकटग्रस्त वन्यजीव आवास क्षेत्रों से अधिकार धारकों को वन्यजीव संरक्षण के लिए पुनर्स्थापित किया जा रहा है, उन क्षेत्रों को राज्य सरकार या केन्द्रीय सरकार या कोई भी और इकाई बाद में किसी अन्य उपयोग के लिए स्थानांतरित नहीं करेगी।

2.2 आधारभूत विचार

पहले, वन अधिकार अधिनियम प्रावधानों का सार समझने के लिए, हमें वन अधिकार अधिनियम की प्रस्तावना से शुरू करना होगा, जो (अन्य बातों के साथ) कहती है:

[वन अधिकारों] में जैवविविधता के संरक्षण और शाश्वत उपयोग तथा पारिस्थितिकीय संतुलन बनाए रखने की ज़िम्मेदारियाँ और अधिकार शामिल हैं और साथ ही शामिल है **उनके माध्यम से वनों की संरक्षण व्यवस्था को सशक्त करना...**

और

[अधिकारों को मान्यता न दिए जाने के कारण उन वनवासियों के साथ ऐतिहासिक अन्याय हुआ], **जो वनवासी वन पारिस्थितिकी की अस्तित्व और शाश्वतता का अभिन्न अंग हैं।**

इस तरह शुरू से ही वन अधिकार अधिनियम वन्यजीव संरक्षण की सोच और रूपावली को पलटने का प्रयास कर रहा है, यह कहते हुए कि वनवासी वन संरक्षण के दुश्मन नहीं बल्कि वास्तव में **संरक्षण का अभिन्न अंग हैं।** इसके बाद के सभी खंडों को पढ़ते समय प्रस्तावना के इस दृष्टिकोण को ध्यान में रखा जाना चाहिए। विशेषकर, यदि संकटग्रस्त वन्यजीव आवास प्रावधानों को वनवासियों और वन्यजीव संरक्षण के बीच संभावित तनावों और संघर्ष की स्थिति का निवारण करने के लिए लागू किया जाता है तो अधिनियम में शुरू से ही सहअस्तित्व का आधार लिया जाना चाहिए ये स्पष्ट कर दिया गया है।

दूसरा, संकटग्रस्त वन्यजीव आवास प्रावधान मुख्यतः ऐसे संभावित तनाव की स्थिति के समाधान के लिए विस्तृत प्रक्रिया निर्धारित करते हैं। इसमें ज़रूरी है कि:

क. पहले अधिकारों को पूरी मान्यता दी जाए,

ख. उचित प्रतिनिधित्व के साथ एक विशेषज्ञ समिति गठित की जाए,

ग. यह समिति विमर्श की खुली प्रक्रिया अपनाए,

घ. हर क्षेत्र विशेष के लिए वहा की परिस्थितिनुसार वैज्ञानिक और निष्पक्ष मापदंडों का उपयोग किया जाए,

च. अपरिवर्तनीय क्षति का खतरा (केवल खतरा है कहने से नहीं होगा) और वन्यजीव प्रजातियों के अस्तित्व के लिए खतरे को स्थापित करना अनिवार्य होगा,

छ. सह-अस्तित्व और अन्य 'उचित विकल्पों' का पहले परीक्षण किया जाए,

ज. पुनर्स्थापन के बारे में तभी सोचा जाए जब यह स्थापित कर लिया गया हो कि सह-अस्तित्व बिल्कुल भी संभव नहीं है,

झ. यदि पुनर्स्थापन की आवश्यकता है, तो सभी कानून और नियमों का अनुसरण करते हुए पुनर्स्थापन का पैकेज तैयार किया जाए और उसे पूरी पारदर्शिता से पुनर्स्थापित होने वाले समुदाय को बताया जाए, और

ट. समुदाय पुनर्स्थापित होने के लिए और पुनर्स्थापन के पैकेज के लिए अपनी पूर्ण और पूर्व सूचित सहमति दे।

तीसरा, परिभाषा में उपयुक्त शब्द अनतिक्रांत (inviolate) को खंड 4(2) की शब्दावली के संदर्भ में समझा जाना चाहिए, जैसे कि, संकटग्रस्त वन्यजीव आवास क्षेत्र **या तो अधिकारों में संशोधन करके या फिर अधिकार-धारकों को पुनर्स्थापित करके बनाए जा सकते हैं,** और 4(2)(b) जो कि **अपरिवर्तनीय क्षति और अस्तित्व को खतरे** से संबंधित है। ध्यान दें कि यहाँ पर किसी भी प्रकार की 'मानवरहितता' की कोई मांग नहीं की गई है। यहाँ अनतिक्रांत **(inviolate) का साधारण सा मतलब है ऐसी स्थिति जहां कोई अपरिवर्तनीय क्षति नहीं है और अस्तित्व को कोई खतरा नहीं है,** ऐसी स्थिति नहीं जहां पर कोई मानवीय मौजूदगी न हो। साथ ही यह अधिनियम सह-अस्तित्व के विकल्प के परीक्षण की आवश्यकता पर जोर देता है जिससे, एक बार फिर इस व्याख्या को बल मिलता है कि अधिनियम में अनतिक्रांत (inviolate) का मतलब यह नहीं है कि क्षेत्र मानवीय मौजूदगी से अछूता हो। दूसरे शब्दों में, संकटग्रस्त वन्यजीव आवास की जिस प्रकार वन अधिकार अधिनियम **में कल्पना की गई है, उसमें ज़रूरी नहीं है कि वनवासियों का पुनर्स्थापन किया जाए। यह आवश्यक होने पर वन अधिकारों में संशोधन करके सह-अस्तित्व का क्षेत्र भी हो सकता है।**

चौथा, यह भी याद रखना ज़रूरी है कि संकटग्रस्त वन्यजीव आवास प्रावधान केवल राष्ट्रीय उद्यानों या अभ्यारण्यों पर ही लागू होते हैं (उनके बफर ज़ोन या दो अभ्यारण्यों के बीच के क्षेत्रों में नहीं)। इसके अतिरिक्त, राष्ट्रीय उद्यान और अभ्यारण्यों में भी यदि अपरिवर्तनीय क्षति या अस्तित्व को खतरे की कोई संभावना नहीं है, तो फिर राष्ट्रीय उद्यान/ अभ्यारण्य के किसी हिस्से को संकटग्रस्त वन्यजीव आवास क्षेत्र घोषित करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

3. संरक्षित क्षेत्रों में संकटग्रस्त वन्यजीव आवास क्षेत्रों की पहचान करने की प्रक्रिया

ऊपर दिए गए कानूनी प्रावधानों और उनकी व्याख्या से पता चलता है कि किसी संरक्षित क्षेत्र के अंदर संकटग्रस्त वन्यजीव आवास क्षेत्र बनाने की ज़रूरत, जगह और प्रकार निर्धारित करने की सही प्रक्रिया क्या होनी चाहिए| हमारा मानना है कि संकटग्रस्त वन्यजीव आवास क्षेत्र निर्धारित करने की प्रक्रिया सही हो इस के लिए ज़िम्मेदारियाँ दो स्तरों पर हैं: वन अधिकार अधिनियम के क्रियान्वयन के लिए स्थापित नोडल एजेंसी (और आम तौर पर राज्य सरकार भी) पर, और विशिष्ट संरक्षित क्षेत्र की विशेषज्ञ समिति पर।

3.1 नोडल एजेंसी (आदिवासी विकास विभाग) व अन्य राज्य सरकार की एजेंसियों की ज़िम्मेदारियाँ

चरण 1: वन अधिकार अधिनियम के अंतर्गत अधिकारों को मान्यता देने की प्रक्रिया पूरी रूप से पूरी की जाए। यह पहली और सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता है। संकटग्रस्त वन्यजीव आवास की ज़रूरत वहाँ पैदा होती है जहां वन अधिकारों के कारण महत्वपूर्ण वन्यजीव प्रजातियों के लिए 'अपरिवर्तनीय क्षति और अस्तित्व को खतरा' हो। अतः, हम संकटग्रस्त वन्यजीव आवास क्षेत्र के बारे में बात भी नहीं कर सकते, जब तक कि पहले वन अधिकारों को पूरी तरह से मान्यता न दे दी गई हो, और असल में ग्राम सभाओं ने सामुदायिक वन संसाधन प्रबंधन योजना तैयार न कर ली हो| इन योजनाओंसेही ये समझा जा सकता है कि वन अधिकार (और ज़िम्मेदारियाँ) किस प्रकार निष्पादित किए जाएंगे!

क. नोडल एजेंसी, इस मामले में आदिवासी विकास विभाग, को संरक्षित क्षेत्र के अंदर और आस-पास के सभी गांवों/ बस्तियों (सर्वेक्षित और असर्वेक्षित)/ वन ग्रामों, आदि की पहचान करनी अनिवार्य है, जो पारंपरिक रूप से जंगल में रहते या उसका उपयोग करते आए हैं। ध्यान दें कि यह सूची केवल संरक्षित क्षेत्र के अंदर के गांवों की नहीं होनी चाहिए। अक्सर संरक्षित क्षेत्र की सीमा से लगते हुए गाँव, और उससे कुछ दूर के गांवों के भी संरक्षित क्षेत्र के कुछ हिस्सों में वन उपयोग के अधिकार रहते हैं। यह सूची बनाने के लिए कई स्रोत हो सकते हैं, जिसमें शामिल है जनगणना के ग्राम सीमा मानचित्र, वन विभाग आँकड़े, राजस्व विभाग के मानचित्र, और ज़मीनी आँकड़े। महत्वपूर्ण यह है कि यह सूची व्यापक और संपूर्ण हो|[2]

ATREE - कल्पवृक्ष टीम ने महाराष्ट्र के 39 संरक्षित क्षेत्रों के अंदर या आस-पास बसे गांवों की सूची तैयार की है जिसे उदाहरण के लिए उपयोग किया जा सकता है।

ख. नोडल एजेंसी को सभी वनवासियों को अवगत कराना होगा कि उनके वन अधिकार अधिनियम के अंतर्गत क्या अधिकार हैं, जिसमें विशेषकर सामुदायिक वन (उपयोग) अधिकार (सी.आर.) (खंड 2(1)(b)-(e)) और सामुदायिक वन संसाधन अधिकार (खंड 3(1)(i)) शामिल हैं।

ग. नोडल एजेंसी को सुनिश्चित करना होगा कि इन सभी अधिकारों की मान्यता और बंदोबस्ती, वन अधिकार अधिनियम की भावना और प्रक्रियाओं के अनुसार की जाए।

घ. सही और उचित बंदोबस्ती सुनिश्चित करने के लिए, इस प्रक्रिया के दौरान, वन विभाग द्वारा किसी भी संरक्षित क्षेत्र में किसी भी कारण या कार्यक्रम के अंतर्गत कोई पुनर्स्थापन गतिविधि नहीं की जानी चाहिए।

च. अधिकारों को मान्यता देने के बाद, ग्राम सभाओं को वन अधिकार अधिनियम नियमों के खंड 4(e) और (f) के प्रावधानों के अनुसार, सामुदायिक वन संसाधन अधिकार प्रबंधन समितियाँ गठित करने और अपनी प्राथमिक सामुदायिक वन संसाधन अधिकार प्रबंधन योजनाएं बनाने के लिए सशक्त किया जाए, जिसके लिए वे आसान नमूने का उपयोग करें जैसे कि सितंबर 2017 के महाराष्ट्र सरकार के जी.आर. में दिया गया है। आदिवासी विभाग महाराष्ट्र ने जिस तरह महाराष्ट्र के अन्य क्षेत्रों में ये योजनाए बनाने के लिए ग्राम सभाओं को आर्थिक सहायता भी दी है वो महाराष्ट्र के संरक्षित क्षेत्रों और अन्य राज्यों के लिए एक उदाहरण हो सकता है|

चरण 2: विशेषज्ञ समिति बनेगी या नहीं, यह निर्णय लेना - किसी संरक्षित क्षेत्र में संकटग्रस्त वन्यजीव आवास की

[2]'संकटग्रस्त वन्यजीव आवास' समिति की अंतरिम रिपोर्ट यहाँ देखे:
https://sites.google.com/view/cwh-monitoring-committee/home#h.bxlvxw18qvpk.

आवश्यकता और प्रकार निर्धारित करने का निर्णय तभी लिया जा सकता है जब उस संरक्षित क्षेत्र से संबंधित ग्राम सभाओं की सामुदायिक वन संसाधन प्रबंधन योजनाओं के अध्ययन और प्रत्यक्ष प्रमाण के आधार पर ये सिद्ध हो जाये कि वन्यजीव संरक्षण और वन अधिकारों के बीच के तनाव से वन्यजीवों और उनके अधिवास को अपरिवर्तनीय क्षति और अस्तित्व का खतरा है।

चरण 3: संरक्षित क्षेत्र स्तरीय विशेषज्ञ समितियाँ सही तरीके से गठित और सूचित की जानी चाहिए।
यदि संकटग्रस्त वन्यजीव आवास प्रावधानों को ठीक तरह से लागू करना है, तो विशेषज्ञ समितियों के गठन और प्रशिक्षण में संकटग्रस्त वन्यजीव आवास प्रावधानों की भावना का अनुसरण किया जाना ज़रूरी है, और समिति के सदस्य उनको दिए जा रहे जटिल कार्य को करने में दक्ष होने चाहिएं। इसके लिए ज़रूरी है कि समिति में:

क. **जीव विज्ञान विशेषज्ञ** शामिल हो (केवल वन्यजीव प्रेमी ही नहीं) जो कि उस संरक्षित क्षेत्र से परिचित हों और जो अधिकारों के पालन और वन्यजीवों के अस्तित्व के बीच के तनावों का निष्पक्ष मूल्यांकन करने के लिए तैयार हों।

ख. **समाज शास्त्री**[3] शामिल हो जो वन अधिकारों, वनवासियों (विशेषकर आदिवासी) संस्कृतियों और आजीविकाओं और संबंधित मुद्दों से परिचित हो।

ग. उन गैर सरकारी संस्थाओं के प्रतिनिधि भी शामिल हों जो उस क्षेत्र में वन अधिकार अधिनियम के क्रियान्वयन के लिए काम करती हों।

घ. राज्य सरकार के आदिवासी विभाग का एक ऐसा प्रतिनिधि शामिल हो जो उस विशिष्ट क्षेत्र के सामाजिक, सांस्कृतिक और अन्य मुद्दों से परिचित हो।

च. वन अधिकार अधिनियम और विशेष रूप से संकटग्रस्त वन्यजीव आवास प्रावधानों और इनकी व्याख्या पर **सही तरीके से प्रशिक्षित हो।** प्रशिक्षण स्थानीय भाषा में किया जाए, क्योंकि विशेषज्ञ समिति में स्थानीय ग्राम पंचायतों के प्रतिनिधि भी शामिल होते हैं।[4]

3.2 संरक्षित क्षेत्र की संकटग्रस्त वन्यजीव आवास विशेषज्ञ समिति की ज़िम्मेदारियाँ

संकटग्रस्त वन्यजीव आवास विशेषज्ञ समिति की ज़िम्मेदारी बेहद चुनौतीपूर्ण और जटिल है, जिसमें उन्हें ऊपर की गई चर्चा के अनुसार, वनाधिकारों के उपयोग और वन्यजीवों को अपरिवर्तनीय क्षति से बचाने के बीच उचित संतुलन बनाने के लिए विस्तृत आकलन, विमर्श, उचित प्रक्रियाओं का अनुसरण और पारदर्शिता सुनिश्चित करनी है, वैज्ञानिक आंकड़ों का उपयोग और पारंपरिक ज्ञान को शामिल करना है, आदि।

चरण 4: ये निर्धारित करना कि वनाधिकारों का उपयोग (जैसा कि संबंधित ग्राम सभाओं की सामुदायिक वन संसाधन प्रबंधन योजनाओं में प्रस्तावित किया गया हो) के कारण **अपरिवर्तनीय क्षति** होगी या नहीं और किसी विशिष्ट वन्यजीव प्रजाति के **अस्तित्व को खतरा** होगा या नहीं। यहाँ ध्यान दिया जाए कि पिछला अनुभव आगे क्या होगा वह निर्धारित करने के लिए **अच्छा मार्गदर्शक नहीं है**, क्योंकि वनवासियों का पिछला व्यवहार किसी विशिष्ट क्षेत्र में उनके पारंपरिक अधिकारों को मान्यता न मिलने और विस्थापन के निरंतर भय की स्थिति में किया गया था। सामुदायिक वन संसाधन प्रबंधन योजनाएं सुरक्षित अधिकारों के आधार पर सु-परिभाषित क्षेत्रों के लिए बनाई जाती हैं और उन्हें जैवविविधता संरक्षण तथा शाश्वत उपयोग के लिए ज़िम्मेदारियाँ भी दी जाती हैं। इसलिए सामुदायिक वन संसाधन प्रबंधन योजनाओं के संभावित प्रभावों का नये तरीके से आकलन किया जाना **आवश्यक** है।
सैद्धांतिक रूप से, इस आकलन के लिए संभावित प्रभावों को समझने के लिए कम से कम ५ वर्ष तक लग सकते है। ध्यान देने की बात है की इस दौरान इन योजनाओं मे शामिल गतिविधियों के परिणाम का निर्धारण संयुक्त रूप से किया जाना चाहिए, परिणामों के विषय में समय समय पर ग्राम सभाओं से विमर्श किए जाएं|

चरण 5: यदि अपरिवर्तनीय क्षति का खतरा स्थापित हो जाता है, तब स्थानीय समुदायों के साथ पूरी तरह से चर्चा करके और उनकी सहमति के साथ, यह विचार किया जाए कि इन

[3] पर्यावरण मंत्रालय के 2018 के दिशानिर्देशों के अनुसार।
[4] पर्यावरण मंत्रालय के जनवरी 2018 के संकटग्रस्त वन्यजीव आवास दिशानिर्देशों के अनुसार।

खतरों को कैसे संबोधित किया जाए और वन अधिकार अधिनियम के खंड 4(2) के अनुसार अनिवार्य, उनकी सामुदायिक वन संसाधन प्रबंधन योजनाओं को कैसे **सुधारा** जा सकता है, जिसमें या तो वनाधिकारों के उपयोग में **कमी या संशोधन**[5] किया जाए। ध्यान दें कि चूंकि यहाँ पर ज़ोर वन्यजीवों को होने वाले संभावित खतरों पर है, वन विभाग की गतिविधियों, जिसमें पर्यटन, अग्नि-रेखाएं, सड़क कार्य, भवन निर्माण, और अन्य एजेंसियों की अन्य गतिविधियों को भी ध्यान में रखा जाए। इस चरण का उद्देश्य है कि जहां तक संभव हो, **सह-अस्तित्व की संभावना की जांच करना** (खंड 4(2)(c))। यदि अधिकारों में संशोधन/ कमी की जानी है, तो यह देखना होगा कि इनका आजीविकाओं पर क्या प्रभाव पड़ेगा और इसके लिए किस प्रकार के मुआवज़े और विकल्प दिए जा सकते हैं, जैसे कि पर्यटन पर स्वामित्व, आदि ।

चरण 6: यदि इस प्रकार का सह-अस्तित्व संभव है, तो लंबे समय के लिए एक सह-प्रबंधन प्रणाली निर्धारित करना। संशोधित (संभावित) सामुदायिक वन संसाधन प्रबंधन योजनाओं और व्यापक संरक्षित क्षेत्र प्रबंधन योजनाओं को लागू करने के लिए इस प्रणाली की ज़रूरत पड़ेगी, जिससे कि लंबे समय के लिए वन्यजीवों और वनवासियों के जीवन की समृद्धि संभव हो सके।

चरण 7: इन क्षेत्रों के सामुदायिक वन संसाधन योजनाओं को, जहाँ आवश्यक है वहाँ संशोधित अधिकार और प्रबंधन योजनाओं की संशोधन की स्थिति में मुआवज़े में दिए गए अधिकारों के विवरण, और सह-प्रबंधन प्रणालियों के विवरण के साथ **संकटग्रस्त वन्यजीव आवास क्षेत्रों की स्थिति की संस्तुति देना**[6]**।**

चरण 8: यदि, चरण 5 का पूरी कठोरता से प्रयास करने के बाद, समितियों और ग्राम सभाओं द्वारा यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि **सह-अस्तित्व बिल्कुल भी संभव नहीं है** (संरक्षित क्षेत्र के कुछ क्षेत्रों में), तब समिति संरक्षित क्षेत्र के उन क्षेत्रों के लिए **समुदायों या उनके अधिकारों के पुनर्स्थापन की सिफारिश दे सकती है।** इस मामले में, समिति को प्रस्तावित पैकेज तैयार करना होगा, जिसके आधार पर समुदायों को पुनर्स्थापित किया जाएगा, जिसमें स्थान, प्रकृति और मुआवज़े की मात्रा, पुनर्स्थापन क्षेत्र में सुरक्षित आजीविकाएं, आदि शामिल हो। यह पैकेज पुनर्स्थापन से संबंधित, विशेषकर भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास और पुनर्स्थापन में उचित मुआवज़ा और पारदर्शिता अधिनियम, 2013 की अनुपालना करते हुए, सभी मौजूदा सरकारी कानूनों और नीतियों के आधार पर तैयार किया जाए, और इसमें व्यक्तिगत तथा सामुदायिक वन अधिकारों के लिए मुआवज़ा शामिल करना ज़रूरी है, और इसे ग्राम सभाओं के संबंधित गांवों/ कस्बे को दिखाया जाए (खंड 4(2)(d) के अनुसार), और एक खुली तथा लोकतांत्रिक प्रक्रिया से उनकी औपचारिक सूचित सहमति ली जाए। फिर संरक्षित क्षेत्र के इस हिस्से के लिए संकटग्रस्त वन्यजीव आवास की घोषणा, और उसके साथ सहमतिपूर्ण पुनर्स्थापन पैकेज की सिफारिश दी जा सकती है।

3.3 सिफारिश देने के बाद राजकीय एजेंसियों की बाकी ज़िम्मेदारियाँ

चरण 9: ऊपर दी गई 7 और 8 की सिफारिशें राज्य वन्यजीव बोर्ड को भेजी जाएंगी जिस पर वे विचार करके पर्यावरण मंत्रालय को विचार करने के लिए भेजेंगे। यदि राज्य वन्यजीव बोर्ड या पर्यावरण मंत्रालय कुछ परिवर्तन करने का सुझाव देते हैं, तो उन्हें वापस ग्राम सभा के पास उनकी सहमति और स्वीकृति के लिए ले जाना होगा और उनके निर्णय के बाद ही इसे दोबारा पर्यावरण मंत्रालय को भेजा जा सकता है।

चरण 10: राज्य सरकार द्वारा एक प्रणाली स्थापित की जानी चाहिए जिसके माध्यम से सभी अनुबंधों - सह-अस्तित्व या पुनर्स्थापन के - को पूरी तरह से और उचित तरीके से लागू किया जाए।

---

[5] ऐसे संशोधनों के कुछ उदाहरण हैं : चरान की प्रथाओं में कुछ बदलाव, कुछ क्षेत्रों को सूक्ष्म वनोपज इकट्ठा करने के लिए बंद कर देना, कुछ क्षेत्रों में कुछ जानवरों के प्रजनन के समय में वनों का उपयोग कम कर देना, कुछ क्षेत्रों/ मौसमों में पर्यटकों के आने पर पाबंदी।

[6] हांलाकी वन अधिकार अधिनियम में स्पष्ट रूप से दो प्रकार के संकटग्रस्त वन्यजीव आवास की व्याख्या नहीं की गई है, दोनों खंडों को साथ पढ़ने और अधिनियम की प्रस्तावना से यह स्पष्ट हो जाता है, कि संकटग्रस्त वन्यजीव आवास अलग-अलग प्रकार के हो सकते हैं: सह-अस्तित्व के साथ या पुनर्स्थापन के साथ या दोनों के साथ।

4. महाराष्ट्र में शुरू की गई संकटग्रस्त वन्यजीव आवास प्रक्रिया में विचलन

जैसे कि ऊपर लिखा गया है, वन्यजीवों को गंभीर खतरा होने की संभावना की पहचान करने की प्रक्रिया और फिर यह निर्धारित करना कि उस खतरे को संकटग्रस्त वन्यजीव आवास प्रावधानों के माध्यम से कैसे संबोधित किया जा सकता है, यह एक लंबी और जटिल प्रक्रिया है। दुर्भाग्यवश, महाराष्ट्र वन विभाग ने राज्य के 55 संरक्षित क्षेत्रों में से 54 में यह प्रक्रिया एक-साथ शुरू कर दी, और इसके क्रियान्वयन की गतिविधियां 2019 में मेलघाट अभ्यारण्य में शुरू की गई। इस प्रक्रिया में वन अधिकार अधिनियम की भावना के कई उल्लंघन किए गए या किए जा रहे हैं।

क. सबसे पहले, वन अधिकारों की मान्यता देने और बंदोबस्ती करने की प्रक्रिया अधूरी है। यह विशेषकर सामुदायिक वन अधिकारों के संदर्भ में सच है। 55 संरक्षित क्षेत्रों में से 39 में हमारे द्वारा किया गया विश्लेषण (जिनके लिए हमें सीमाओं की जानकारी प्राप्त हो पाई) दर्शाता है (2011 के जनगणना मानचित्रों और आंकड़ों के आधार पर) कि इन 39 संरक्षित क्षेत्रों के अंदर या आसपास 1000 गांवों से अधिक गाँव हैं (जिनमें 4 लाख लोग रहते हैं), और परिणामस्वरूप उनके इन संरक्षित क्षेत्रों की सीमाओं में सामुदायिक वन संसाधन अधिकार होने की संभावना है। इनमें से, केवल ~150 गांवों को वन संसाधन अधिकार अधिकार प्राप्त हुए हैं। मुंबई उच्च न्यायालय ने (दिसंबर 2019 में) संरक्षित क्षेत्रों में अधिकारों की बंदोबस्ती पूरी करने के लिए 3 माह का समय दिया था, जिसे बाद में 2 माह के लिए और बढ़ा दिया गया था। लेकिन अनेक गांवों में यह प्रक्रिया अभी शुरू भी नहीं हुई है।

ख. इसके अतिरिक्त, आदिवासी विकास विभाग द्वारा मेलघाट के लिए नियुक्त की गई जांच समिति की रिपोर्ट दर्शाती है,[7] कि मेलघाट में **अधिकारों की मान्यता देने और बंदोबस्ती की प्रक्रिया में ही कई गलतियाँ और अनियमितताएं हैं। जैसे की:**

i. कई गांवों ने दावे दर्ज ही नहीं किए, क्योंकि वे यह नहीं जानते थे कि वन अधिकार अधिनियम के अंतर्गत संरक्षित क्षेत्रों में भी अधिकारों को मान्यता दी जा सकती है।

ii. कई सामुदायिक वन संसाधन दावों को गलत तरीके से अस्वीकार कर दिया गया और अस्वीकार करने का कारण बताया गया कि "क्षेत्र संकटग्रस्त बाघ आवास क्षेत्र है" जो की बिलकुल गैर कानूनी है।

iii. कुछ जगहों पर सामुदायिक वन संसाधन अधिकार उस पूरे क्षेत्र में नहीं दिए गए जिनके लिए उन्होंने प्रमाण जमा किए थे, काफी छोटे क्षेत्र पर उन्हें अधिकार दिए गए।

iv. कई अन्य गांवों में, उनके सामुदायिक वन संसाधन दावों को 8 साल से विलंबित रखा गया और इस बीच विस्थापन-और -पुनर्स्थापन की प्रक्रिया जारी रही और कुछ गाँवों को वन अधिकार अधिनियम की प्रक्रिया शुरू होने से पहले ही पुनर्स्थापित कर दिया गया। कहने की आवश्यकता नहीं है, कि उन्हें उनके संभावित सामुदायिक वन संसाधन अधिकारों के हरजाने के लिए कोई मुआवज़ा नहीं दिया गया।

ग. इसके अतिरिक्त, उच्च न्यायालय में मार्च 2020 में वन विभाग द्वारा दर्ज किए गए एक शपथ पत्र में, यह दावा किया गया है कि 54 में से 25 संरक्षित क्षेत्रों में ऐसे **"संरक्षित क्षेत्र हैं जहां वन अधिकार अधिनियम के अंतर्गत कोई दावा दर्ज नहीं किया गया है, क्योंकि इन क्षेत्रों में कोई मानव आवास/ बस्ती नहीं है"**। वन विभाग के इस वक्तव्य के आधार पर, उच्च न्यायालय से गुज़ारिश की गई कि वे तुरंत इन 25 संरक्षित क्षेत्रों को संकटग्रस्त वन्यजीव आवास क्षेत्र घोषित कर दें, जो कि न्यायालय ने 11 मार्च, 2020 के आदेश के ज़रिए कर दिया। लेकिन, 25 'निर्जन' संरक्षित क्षेत्रों का दावा 'जहां वन अधिकार अधिनियम के अंतर्गत कोई दावा दर्ज नहीं किया गया' बिल्कुल गलत है क्योंकि:

[7] https://sites.google.com/view/cwh-monitoring-committee/homee

i. इन सभी संरक्षित क्षेत्रों की सीमाओं से लगते हुए गाँव बसे हैं, जिनका (प्रत्यक्ष रूप से) पारंपरिक वन उपयोग होगा, जो कि संरक्षित क्षेत्र के अंदर तक जाता होगा और इसलिए वे वन अधिकार अधिनियम के अंतर्गत अधिकारों का दावा कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, सागरेश्वर वन्यजीव अभ्यारण्य के मामले में, संरक्षित क्षेत्र के अधिसूचना के अनुसार ही, 10 गांवों का वन क्षेत्र अभ्यारण्य के अंदर है।

ii. इनमें से कई संरक्षित क्षेत्रों के अंदर मानव आवास मौजूद हैं। उदाहरण के लिए, चंदोली राष्ट्रीय उद्यान में, 1985 की प्राथमिक अधिसूचना में शामिल 33 गांवों में से 4 गाँव अभी भी उद्यान के अंदर बसे हुए हैं। कोयना अभ्यारण्य में, 50 गांवों में से, 3 अभी भी संरक्षित क्षेत्र के अंदर बसे हुए हैं।

iii. कुछ मामलों में, भौगोलिक रूप से संरक्षित क्षेत्र की सीमा के अंदर बसे कुछ गाँव अधिसूचना से छूट गए होंगे, और इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि संरक्षित क्षेत्र में कोई मानवीय आवास नहीं है, जब कि वास्तव में उनके अंदर लोग राजस्व भूमि पर रह रहे हैं। यह मेलघाट बाघ आरक्षित क्षेत्र के मामले में दर्शाया गया है (जो इन 25 संरक्षित क्षेत्रों का हिस्सा नहीं है)।

iv. कुछ मामले ऐसे भी हैं जहां न सिर्फ संरक्षित क्षेत्र के अंदर गाँव बसे हुए हैं, बल्कि उनके सामुदायिक वन संसाधन अधिकारों को मान्यता भी दी गई है। उदाहरण के लिए, करनाला पक्षी अभ्यारण्य में कम-से-कम दो गांवों को सामुदायिक वन संसाधन अधिकारों को मान्यता दी जा चुकी है।

घ. जिस प्रकार संकटग्रस्त वन्यजीव आवास विशेषज्ञ समितियों का गठन किया गया है उसमें कई समस्याएं हैं:

i. विशेषज्ञ समितियों में समाज शास्त्री और गैर सरकारी संस्थाओं के प्रतिनिधि शामिल नहीं किए गए हैं, जो उस क्षेत्र और वन अधिकारों तथा वनवासियों की आजीविकाओं के मुद्दों से परिचित होते हैं, और जो कि संकटग्रस्त वन्यजीव आवास के दिशानिर्देशों के अनुसार आवश्यक है।

ii. कई बार जीव विज्ञान विशेषज्ञों की जगह स्थानीय वन्यजीव ‘प्रेमियों’और उत्साहियों को समिति का सदस्य बना दिया गया है। इनमें से कई तथाकथित विशेषज्ञों का क्षेत्र के वन्यजीव संरक्षण या पारिस्थितिकी पर उच्च-स्तरीय वैज्ञानिक प्रकाशनों का कोई रिकार्ड नहीं है।

iii. दो मामलों में समिति में ऐसे लोग शामिल थे जिन्होंने वन अधिकार अधिनियम की संवैधानिकता को ही न्यायालय में चुनौती दी हुई थी। यह हितों के टकराव की गंभीर स्थिति है, क्योंकि जो व्यक्ति वन अधिकार अधिनियम को संवैधानिक ही नहीं मानता उससे उस कानून के प्रावधानों को लागू करने की प्रक्रिया में निष्पक्षता के साथ भागीदारी करने की उम्मीद नहीं की जा सकती, विशेषकर संकटग्रस्त वन्यजीव आवास जैसे संवेदनशील प्रावधानों के संदर्भ में।

च. विशेषज्ञ समिति के लिए अधिसूचित कार्य का दायरा में संकटग्रस्त वन्यजीव आवास प्रावधानों को गैर-कानूनी और गलत ढंग से पेश किया गया है:

i. शर्त संख्या 5 और 6 इस सवाल से संबंधित हैं कि क्या वन्यजीवों के अधिवास के लिए अतिरिक्त क्षेत्र की आवश्यकता है, जबकि यह सवाल संकटग्रस्त वन्यजीव आवास प्रक्रिया के कार्यक्षेत्र से कोई संबंध नहीं रखता, क्योंकि इसका संदर्भ केवल संरक्षित क्षेत्र की सीमा तक ही सीमित है।

ii. शर्त संख्या 3 गलत है, क्योंकि इसमें ऐसे क्षेत्रों की पहचान करने के लिए कहा गया है जो 'मानवीय प्रभावों के कारण क्षतिग्रस्त/ अस्त-व्यस्त हों', जबकि वन अधिकार अधिनियम के अंतर्गत ऐसे क्षेत्रों की पहचान की जानी है जहां प्रस्तावित

अधिकारों के उपयोग की गतिविधियों के कारण संभवतः 'अपरिवर्तनीय क्षति और अस्तित्व को खतरा हो सकता है', जो साबित करने के लिए कहीं ज़्यादा गंभीर प्रभाव हैं।

iii. विशेषज्ञ समिति को 'संकटग्रस्त वन्यजीव आवास की प्रस्तावित अधिसूचना पर 'वन अधिकार-धारकों' के दृष्टिकोण प्राप्त' करने के लिए कहा गया है, जबकि वास्तव में संकटग्रस्त वन्यजीव आवास के प्रस्ताव के लिए ही 'ग्राम सभाओं' से व्यापक विमर्श किया जाना ज़रूरी है और इसे तैयार करने के लिए समिति में ग्राम पंचायत के प्रतिनिधियों की भागीदारी आवश्यक है।

iv. विशेषज्ञ समिति के सदस्यों के लिए कोई प्रशिक्षण कार्यक्रम नहीं किया गया।

छ. मुंबई उच्च न्यायालय ने 'वैज्ञानिक और निष्पक्ष मानदंडों की पहचान करके उन्हें सार्वजनिक स्तर पर उपलब्ध कराए जाने के अभाव में' मेलघाट में संकटग्रस्त वन्यजीव आवास उद्घोषणा की प्रक्रिया शुरू करने पर आपत्ति व्यक्त की थी। इसके जवाब में, वन विभाग ने भारतीय वन्यजीव संस्थान द्वारा किए गए एक अध्ययन का सहारा लिया, जिसमें दावा किया गया है कि किसी भी बाघ आरक्षित क्षेत्र में कम-से-कम 20 प्रजननशील मादा बाघ होनी चाहिए, जिनको 800-1000 वर्ग कि.मी. अनतिक्रांत (inviolate) क्षेत्र (मतलब कि उस क्षेत्र में कोई मानवीय मौजूदगी न हो) की आवश्यकता होती है। इस मानदंड के साथ कई समस्याएं हैं। पहला, कि इस दावे की सच्चाई पर व्यापक पारिस्थिकीविद समुदाय की कोई रज़ामंदी नहीं है। किसी भी भारतीय बाघ आरक्षित क्षेत्र में 800-1000 वर्ग कि.मी. क्षेत्र मौजूद नहीं है जो मानव-मुक्त हो, लेकिन इसके बावजूद कई जगहों से स्वस्थ बाघ जनसंख्या की रिपोर्टें प्राप्त हुई हैं। बिलगिरी रंगास्वामी बाघ आरक्षित क्षेत्र ने दावा किया है कि वहाँ बाघों की जनसंख्या बढ़ रही है, इसके बावजूद कि वहाँ 5,000 से अधिक सोलीगा आदिवासी, और कई हज़ार गैर-आदिवासी रहते हैं, कॉफी के बागान हैं, और वर्ष 2010 से सोलीगा समुदाय वन उपयोग अधिकार (सी.आर.) और सामुदायिक वन संसाधन अधिकारों का उपयोग करते आ रहे हैं।

दूसरा, सबसे महत्वपूर्ण मुद्दा है कि वन अधिकार अधिनियम यह नहीं पूछता कि 'वन्यजीव संरक्षण के लिए आदर्श आवश्यकता क्या है'। इसमें कहा गया है कि वैज्ञानिक मानदंडों के आधार पर निर्धारित किया जाए कि वन अधिकारों के उपयोग के कारण विशिष्ट प्रजाति को **अपरिवर्तनीय क्षति और अस्तित्व को खतरा** तो नहीं है।

ज. एक तरफ यह ज़ोर देते हुए कि अनतिक्रांत (inviolate) का मतलब है 'मानवीय मौजूदगी से मुक्त' और इसलिए पुनर्स्थापन किया जाना ज़रूरी है, वहीं दूसरी ओर वन विभाग के अधिकारियों ने अक्टूबर 2019 की गैर सरकारी संस्थाओ के साथ की गई एक बैठक में स्वीकार किया कि वे ऐसे अनतिक्रांत (inviolate) क्षेत्रों में सरकार के द्वारा चलाये जा रही पर्यटन के गतिविधियां जारी है और आगे भी जारी रहेंगी!

झ. मेलघाट अभ्यारण्य में विशेषज्ञ समिति द्वारा आयोजित सार्वजनिक विमर्श प्रक्रिया को वीडियो पर रिकॉर्ड किया गया है| उसमें स्पष्ट है कि समिति ने पहले ही तय कर लिया था कि वे पूरे अभ्यारण्य क्षेत्र को संकटग्रस्त वन्यजीव आवास घोषित करने की सिफारिश करेंगे| यह 'विमर्श' वन अधिकार अधिनियम की भावना के बिल्कुल भी अनुरूप नहीं है| इस अधिनियम के अनुसार, यह **संयुक्त रूप से निर्धारित किया जाना** है कि कोई खतरा है भी कि नहीं, और क्या इस खतरे को वन अधिकारों या प्रबंधन योजनाओं में संशोधन करके खत्म किया जा सकता है या नहीं, क्या सह-अस्तित्व संभव है कि नहीं, आदि।

5. आगे की दिशाएं

महाराष्ट्र राज्य वन अधिकार अधिनियम के अंतर्गत वनवासियों के अधिकारों को मान्यता देने की प्रक्रिया में अग्रणी रहा है, विशेषकर सामुदायिक वन संसाधन अधिकारों की मान्यता में, जो कि वनवासियों को वन प्रबंधन और प्रशासन में स्पष्ट भूमिका देने की दिशा में सबसे महत्वपूर्ण कदम है। लेकिन महाराष्ट्र सरकार ने वन्यजीव संरक्षण के नाम पर संकटग्रस्त वन्यजीव आवास के प्रावधानों को लागू करने में जल्दबाजी कर दी, जिसके परिणामस्वरूप कई विसंगतियां और अवैधताएं उत्पन्न हो गईं।

ऊपर दी गई गंभीर विसंगतियों के संदर्भ में, बहुत ज़रूरी हो गया है कि:

क. महाराष्ट्र के सभी संरक्षित क्षेत्रों में संकटग्रस्त वन्यजीव आवास की उद्घोषणा प्रक्रिया को रोक दिया जाए,

ख. भारत के सभी संरक्षित क्षेत्रों में विस्थापन और पुनर्स्थापन की प्रक्रिया को रोक दिया जाए,

ग. संरक्षित क्षेत्रों में अधिकारों की मान्यता और बंदोबस्ती कि प्रक्रिया को पूरी तरह से लागू करने का आदेश दिया जाए और उसे सक्रियता से निभाया जाए, और पूरे भारत में संरक्षित क्षेत्रों के अंदर और उसके आस-पास की ग्राम सभाओं को सामुदायिक वन संसाधन प्रबंधन योजनाएं बनाने के लिए सहयोग दिया जाए, और

घ. महाराष्ट्र में बनाई गई सभी संकटग्रस्त वन्यजीव आवास विशेषज्ञ समितियों को पुनर्गठित और पुनः प्रशिक्षित किया जाए और सुनिश्चित किया जाए कि अन्य राज्यों में भी इसी प्रक्रिया का अनुसरण किया जाए जिससे कि संकटग्रस्त वन्यजीव आवास की पहचान और उद्घोषणा वन अधिनियम अधिकार कानून की भावना के अनुरूप हो।

अप्रचलित 'Fortress conservation' (याने की मानव और वन्यजीव आवास के बीच दीवार खड़ी करने की प्रक्रिया) दृष्टिकोण के कारण भारतीय वन्यजीव संरक्षण नीति शुरुआत से ही समस्याओं और कमियों से ग्रस्त है, और इसके परिणामस्वरूप विशाल सामाजिक विस्थापन, आपदा और संघर्ष की स्थिति पैदा हुए। वन अधिकार अधिनियम ने अभूतपूर्व मौका दिया है कि जैवविविधता संवर्धन पर वनवासी समुदायों के साथ मिलकर एक भागीदार प्रक्रिया के रूप में पुनर्विचार किया जाए। संकटग्रस्त वन्यजीव आवास प्रावधान वनवासियों द्वारा अधिकारों के उपयोग और वन्यजीव संरक्षण के बीच यदि कोई टकराव की स्थिति है तो उसे पहचानने, परीक्षण और संबोधित करने के लिए विस्तृत और भागीदारी पूर्ण तरीके से प्रक्रियाएं उपलब्ध कराते हैं। इन प्रावधानों का उपयोग वनवासियों को विस्थापित करने के एक और उपकरण के रूप में नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि आज के समय में आवश्यक अर्थपूर्ण और समावेशी संरक्षण बनाने के लिए किया जाना चाहिए।

यह अध्ययन ATREE में स्थित सेंटर फॉर एनवायरनमेंट & डेवलपमेंट के मध्य भारत में सामुदायिक वन संसाधन अधिकार कार्यक्रम और कल्पवृक्ष में स्थित संरक्षण & आजीविका कार्यक्रम के सहभागी प्रयास का परिणाम है।

संपर्क: डॉ. शरच्चंद्र लेले (slele@atree.org) और नीमा पाठक ब्रूम (neema.pb@gmail.com)

उद्धरण: लेले एस., पाठक-ब्रूम एन., जोशी ए., छेत्री ए., तत्पति एम. & मोकाशी एस. (2020)। संकटग्रस्त वन्यजीव आवास क्षेत्र: यह क्या है, इसका क्रियान्वयन कैसे होना चाहिए, और इसे किस प्रकार आगे बढ़ाया जा रहा है?, सेंटर फॉर एनवायरनमेंट & डेवलपमेंट, ATREE, बंगलुरु और संरक्षण & आजीविका कार्यक्रम, कल्पवृक्ष, पुणे।

आभार: एडवोकेट शोमोना खन्ना (लीगल रिसोर्स सेन्टर), पूर्णिमा उपाध्याय (खोज, मेलघाट), गितांजय साहू (टाटा सामाजिक विज्ञान संस्थान), तीरथ रावत (ATREE) और आदिवासी विभाग, महाराष्ट्र। कल्पवृक्ष के योगदान में रोहिणी नीलेकणी फिलेन्थ्रोपीज़ का सहयोग मिला|

अशोका ट्रस्ट फॉर रिसर्च इन ईकोलॉजी एंड दि एनवायरनमेंट (ATREE) पर्यावरणीय संरक्षण और शाश्वत विकास प्राप्त करने के लिए प्रतिबद्ध है।

ATREE का सेंटर फॉर एनवायरनमेंट & डेवलपमेंट, वन, जल, और जलवायु परिवर्तन के क्षेत्र में काम करता है। वन कार्यक्षेत्र में, सेंटर के काम का उद्देश्य है शाश्वत, न्याय्य और आजीविकाओं को बढ़ावा देने वाले परिणामों को प्रोत्साहित करना, और दक्षिण एशिया में वन प्रशासन के क्षेत्र में एक मज़बूत लोकतान्त्रिक प्रक्रिया स्थापित करना। इसके लिए प्राकृतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और प्रशासकीय पहलुओं का विश्लेषण करना और सक्रिय अध्ययन तथा नीति क्रियान्वयन के क्षेत्र में काम करना।

कल्पवृक्ष भारत में स्थित एक गैर-मुनाफ़ा संस्था है। यह संस्था 40 वर्षों से पर्यावरण, परिस्थितकी, विकास, और मुख्यधारा विकास के विकल्पों के क्षेत्र में अध्ययन, नेटवर्किंग, शिक्षा, ज़मीं स्तरीय कार्य और जनवकालत का काम कर रही है।

सेंटर फॉर एनवायरनमेंट & डेवलपमेंट, ATREE

www.atree.org/ced

कल्पवृक्ष

www.kalpavriksh.org